eISSN 2581-8996
HTTPS://DOI.ORG/10.5281/ZENODO.21742999
INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED JOURNAL
Volume 09, Issue 02, July 2026

लोकमीतों में संवेदनात्मक अभिव्यक्ति एवं परिवर्तित स्वरूप का विवेचनात्मक अध्ययन

प्रोफेसर शशिप्रभा तोमर[1]
[1]विभागाध्यक्ष – हिन्दी विभाग, बी0डी0एम0एम0 गर्ल्स डिग्री कॉलेज शिकोहाबाद, उ0प्र0

Received: 21 July 2026, Accepted: 25 July 2026, Published with Peer Reviewed on line: 31 July 2026

Abstract

लोक गीतों में संवेदनाओं की अभिव्यक्ति समाहित होती है। अंग्रेजी के "Folk" शब्द का हिन्दी अनुवाद 'लोक' कहलाता है। इसका वास्तविक अर्थ उस समाज से है, जिसमें सामूहिक विवेक और अनुभव का सामंजस्य है। आम जन के सुख–दुख में आत्मीय स्तर तक जुड़ना लोक संवेदना के रूप को प्रतिफलित करता है। संवेदना हमारी भाव–प्रवणता एवं बौद्धिक चेतना के मध्य एक सेतु का कार्य करती है। लोकगीत समाज में विभिन्न संस्कारों, उत्सवों (मुंडन, जनेऊ, भात, श्रमगीत, सावन–होली) पर गाये जाते हैं एवं सम्बन्धों की गहनता को अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। मालिनी अवस्थी, इला अरूण, तीजनबाई, शारदा सिन्हा इत्यादि अनेकानेक लोक–कलाकारों ने लोक–गीत परम्परा को समृद्ध किया है किन्तु वैश्वीकरण के दौर में एवं पाश्चात्य आधुनिक प्रभाव के कारण लोक–गीतों का अस्तित्व चुनौती का विषय है। यदि वर्तमान में इसके संरक्षण के प्रयास नहीं किये गये, तो वह दिन दूर नहीं जब लोक–गीत विलुप्त हो जायेंगे। यद्यपि सांस्कृतिक महोत्सव इस दिशा में सराहनीय भूमिका का निर्वहन करते हैं। पारम्परिक वाद्य यन्त्रों का प्रयोग भी कम होता जा रहा है। जिससे लोकगीत अपने मूल स्वरूप को खोते जा रहे हैं। डिजिटल प्लेटफॉर्म इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य करने का प्रयास कर रहे हैं। आज लोकगीतों का संरक्षण एवं इसकी संवेदनशीलता को बनाये रखना सामाजिक एवं सांस्कृतिक दायित्व भी है।

बीज शब्द : लोक की अवधारणा, लोक गीत का स्वरूप, लोक संस्कृति, लोक गीत एवं मानवीय संवेदना, लोकगीत एवं आधुनिकता, लोक गीतों का संरक्षण

Introduction

''लोकगीतों की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। हृदय की अनुभूतियां तरंगित होकर जब प्रकृति के मध्य बहने लगती हैं, तो लोक संगीत का जन्म होता है।'' – (निराला)

जनमानस की संपूर्ण भावनाओं की अभिव्यक्ति लोक साहित्य में प्रस्फुटित होती है। लोक साहित्य के अन्तर्गत संवेदनाओं की अभिव्यक्ति समाहित होती है। इसके अन्तर्गत सामाजिक रीति–रिवाज, उत्सव, अनुष्ठान एवं सामाजिक प्रथाओं का सजीव चित्रांकन होता है। अंग्रेजी के "Folk" शब्द का हिन्दी अनुवाद 'लोक' कहलाता है। 'लोक' तीन प्रकार से शरीर तोषण हेतु, मन तोषण हेतु एवं मन को आनंदित करने हेतु अपनी भावनाओं को अभिव्यक्ति प्रदान करता है। डॉ0 कुन्दन लाल उप्रेती के अनुसार 'आदिम मानव के मस्तिष्क की सीधी तथा सच्ची अभिव्यक्ति ही लोकवार्ता तथा लोक साहित्य है।''[1] 'लोक' शब्द का वास्तविक अर्थ उस समाज से है, जिसमें सामहिक विवेक एवं अनुभव का सामंजस्य है। यह अनुभव एवं ज्ञान से परिपूर्ण जीवन का प्रतिबिम्ब है। लोक साहित्य में लोक संस्कृति के विविध रंगों का समावेश होता है। डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'लोक' शब्द को व्याख्यायित किया है –

eISSN 2581-8996
HTTPS://DOI.ORG/10.5281/ZENODO.21742999
INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED JOURNAL
Volume 09, Issue 02, July 2026

''लोक शब्द का अर्थ 'जनपद' या 'ग्राम्य' नहीं है, बल्कि नगरों एवं गॉवों में फैली हुई वह समूची जनता है, जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियां नहीं हैं।''[2] प्रारम्भिक साहित्य में वेदों में भी लोक शब्द का प्रयोग मिलता है। वेदों में उल्लिखित बात को वैदिक एवं लोक में कही गई बात को लौकिक की संज्ञा प्रदान की गई। लोक साहित्य का ब्रह्मसूत्र 'सर्व भूत हिते रतः' अर्थात् समस्त प्राणियों का हित। ऋग्वेद के पुरूष सूक्त में भी लोक शब्द का प्रयोग मिलता है। वेद एवं लोक का महत्व गीता में भी प्रतिपादित किया गया है। 'जन' शब्द का प्रयोग अथर्व वेद के प्रथिवी सूक्त में भी परिलक्षित है। लोक साहित्य की रचना लोक करता है। जिसमें लोक मानव का हृदय उद्भूत होता है। जिसके कारण उसमें मानवीय संवेदनायें, करूणा आदि का समावेश होता है। लोक साहित्य आम जनता की संवेदनाओं, विचारों एवं सांस्कृतिक परिस्थिति को अभिव्यक्ति प्रदान करता है।

''लोक साहित्य सभी देशों और प्रदेशों का अपना अद्भुत सौन्दर्य और माधुर्य रखता है। उसके पीछे शिष्ट साहित्य की तरह एक लम्बी परम्परा है, जो शिष्ट साहित्य से ही अधिक बड़ी और अविच्छिन्न चली आई है। शिष्ट साहित्य भी लोक साहित्य की ही उपज है।''(राहुल सांकृत्यायन, राहुल निबंधावली, पृ0–13) आम जन के सुख दुख में आत्मीय स्तर तक जुड़ना लोक संवेदना के रूप को प्रतिफलित करता है। यह संवेदना लोक साहित्य में विविध रूपों में अभिव्यक्त होती हुई दृष्टिगत होती है। लोक–कथाओं एवं मुहावरे–लोकोक्तियों के माध्यम से भी मानवीय एवं नैतिक मूल्यों को सहज रूप से अभिव्यक्त किया जाता है। डॉ0 नगेन्द्र ने संवेदना को ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त अनुभव अथवा ज्ञान माना है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल संवेदना का अर्थ सुख–दुखात्मक अनुभूति मानते हैं किन्तु वास्तव में संवेदना हमारी भाव–प्रवणता एवं बौद्धिक चेतना के मध्य एक सेतु का कार्य करती है।

लोकगीतों की उत्पत्ति से जनमानस में अनुभूति की चरमावस्था स्वयं हो जाती है – लोक–गीत लोक–साहित्य का ही अंग है। जिसके अन्तर्गत मानवीय मूल्य, संवेदनाओं का असीमित भण्डार लोक संस्कृति का संरक्षण करता हुआ दिखाई देता है। लोक गीतों में व्यक्ति विशेष के सुख–दुख को अभिव्यंजित करने की सामर्थ्य होती है। लोकगीतों में काव्यात्मकता होने के फलस्वरूप लयात्मकता की प्रधानता होती है। डॉ0 शान्ति अवस्थी ने इस सन्दर्भ में अपना मत व्यक्त किया है –

''लोक–गीत मानव हृदय की प्रकृत भावनाओं की तन्मयता की तीव्रतम अवस्था की गति है, जो स्वर और ताल को प्रधानता न देकर लय या धुन प्रधान होते हैं।''[3]

लोकगीत समाज में विभिन्न संस्कारों, उत्सवों में गाये जाते हैं। यह लोक साहित्य का सर्वाधिक प्रचलित रूप माना जाता है। यह भारतीय संस्कृति की अमूल्य निधि है। जन्म के अवसर पर गाये जाने वाले सोहर से लेकर विविध चरणों में विभिन्न संस्कार मुंडन, जनेऊ तथा विवाह के अवसर पर भात, बरना–बरनी, कन्यादान विदाई इत्यादि के गीत लोकगीतों की श्रेणी में आते हैं। इन गीतों में हर्ष–विषाद, प्रेम, आशा और कभी–कभी जीवन की वास्तविक परिस्थिति के चित्रण में संवेदनाओं की भूमिका होती है। समाज के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन इन लोकगीतों में स्पश्ट परिलक्षित होता है। यह सम्बन्धों की गहनता को अभिव्यक्त करते हैं। डॉ0 कुन्दनलाल उप्रेती का कथन है–

''जब समस्त जन–मानस में चेतन–अचेतन रूप में जो भावनायें गीतबद्ध होकर अभिव्यक्त होती हैं, उन्हें लोक–गीत कहते हैं।''[4]

eISSN 2581-8996
HTTPS://DOI.ORG/10.5281/ZENODO.21742999
INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED JOURNAL
Volume 09, Issue 02, July 2026

लोकगीतों में भारतीय संस्कृति का निरूपण भलीभॉति मिलता है। भाई–बहिन का पवित्र प्रेम, पुत्री का स्नेह मन की कोमल भावनाओं का चित्रण लोक–गीतों में भली भांति मिलता है।

'आरे आरे जोगिन, भाटिन सब कोई गावहु हो।

मेरा जियरा भइला बा हुलास, वीरन मोर आवेले हो।''[5]

भाई को कष्ट में देखकर बहिन को सर्वाधिक कष्ट की अनुभूति होती है। ''भाई का चोट अवरू केहुनी क घाव न सहाला''। पुत्री की विदाई अत्यन्त करूणापूर्ण होती है। एक लोकगीत में कन्या अपने धनवान पिता से प्रश्न करती है –

''काहे को ब्याही रे लक्खी बाबुल मोरे

भइयों को दीन्हें महल दुमहले

हमको दिया परदेश रे ''[6]

भारतीय लोक साहित्य के लोक–गीतों में नारी जाति का दर्द, प्रेम, आकांक्षा, प्रताड़ना स्पष्टतः परिलक्षित होती है।

'क्यो रे नऊआ पेट कटऊआ क्यों दीनी परदेस जी'' कहते हुए भारतीय सामाजिक स्थिति को अभिव्यक्त किया गया है। संतानहीनता से युक्त स्त्री को परिवारीजनों के व्यंग्यवाण चुभते हैं। निम्न लोकगीत में स्त्री की उपेक्षा की मार्मिक अभिव्यक्ति है –

''सासु मोरी कहेली बंझनियां, ननद ब्रजवासिनी हो।''

इसी प्रकार पुत्री जन्म पर भी स्त्री को ही उपेक्षा का शिकार होना पड़ता है। गर्भस्थ शिशु की ''मैया मोहे जनम से पहिले मत मार'' वेदना असीमित है।

इसी प्रकार लोकगीतों के अन्तर्गत सावन–भादों, होली के गीतों का भी गायन किया जाता है। विभिन्न उत्सव जैसे– गणेश चतुर्थी, नागपंचमी, गोधन, श्रमगीत इत्यादि भी लोक–गीत की श्रेणी में आते हैं। विभिन्न व्रतों के अन्तर्गत छठी माता का व्रत, करवा–चौथ, देवठान, एकादशी, कार्तिक स्नान का व्रत रखते हुए लोकगीतों को गाया जाता है। देवठान के अवसर पर देवों को उठाते हुए ''उठो देवा, बैठो देवा, आंगुरिया चटकाओ देवा' यह लोकगीत प्रचलित है। विभिन्न अवसरों पर गाये जाने वाले लोकगीत लोक–संस्कृति के विभिन्न रूपों को चित्रित करते हैं।

स्त्रियों के श्रम गीतों में घर की दुर्व्यवस्था इत्यादि का चित्रण मिलता है –

''ना इस घर में चक्की री ना चूल्हा,

ना चक्की में पूण वैहण मेरी

बुरा है ससुर का देस''

eISSN 2581-8996
HTTPS://DOI.ORG/10.5281/ZENODO.21742999
INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED JOURNAL
Volume 09, Issue 02, July 2026

लोकगीतों में सामान्य जनता की धार्मिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों का मनोरम द्रश्य होता है। इसमें सर्वभूतहिताय एवं सर्वजन सुखाय की भावना होती है। लोकगीतों के अन्तर्गत विशेश रूप से धार्मिक गीतों में शिव, सूर्य, कृष्ण, राम, देवी आदि की पूजा के गीत गाये जाते हैं। शिव की पूजा का उल्लेख अनेक गीतों में पाया जाता है :–

''चल देखि आई भोला के लाल गली''

सूर्यो पासना में छठी माता के व्रत का अनुष्ठान करती हैं।

''गोड़वा दुःखइले रे डॉढवा पिरइले, कब से जे बानी हम ठाढ़''। तुलसी के पौधे को पवित्र मानकर उसको अर्घ्य देना, आरती करना एवं स्तुति का भी विधान है। इन लोकगीतों में जनता के धार्मिक विश्वासों का चित्रण उपलब्ध होता है।

डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय के शब्दों में –

''भारतीय संस्कृति का सच्चा तथा स्वाभाविक चित्रण लोक साहित्य में उपलब्ध होता है। लोक संस्कृति के वास्तविक स्वरूप को देखने के लिए लोक साहित्य का अनुसन्धान करना पड़ेगा। ..... लोक साहित्य में सामान्य जनता की धार्मिक–सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितियों के उभयपक्षों का रमणीय चित्रण उपलब्ध होता है।''[7]

यह गीत किसी विशिष्ट समुदाय की बात न करके अपितु समाज के सभी वर्गों की पृथक–पृथक अनुभूतियों के भावों का प्रकटीकरण करके समग्र भाव समाहित करते हैं। देवेन्द्र सत्यार्थी लिखते हैं कि –

''कहाँ से आते हैं इतने गीत ? स्मरण–विस्मरण की ऑख–मिचौनी से। कुछ अट्टहास से । कुछ उदास हृदय से। कहाँ से आते हैं इतने गीत ? जीवन के खेत में उगते हैं यह सब गीत। कल्पना भी अपना काम करती है, रसवृत्ति भी और भावना भी, नृत्य का हिलोरा भी पर ये सब है खाद। जीवन के सुख जीवन के दुख से है लोकगीत के बीज''[8] इनकी अभिव्यक्ति लयात्मक होने के कारण संगीतात्मकता अन्तर्निहित होती है। साहित्यिक गीत स्वर और ताल से युक्त होते हैं। जबकि लोक–गीत में लय एवं धुन का ही महत्व होता है। लोक गीतों के अन्तर्गत मालिनी अवस्थी, मामे खान, तीजनबाई, जुगनीबाई, अनवर खान, शारदा सिन्हा, इला अरूण इत्यादि अनेकानेक कलाकारों ने लोक–गीत परम्परा को समृद्ध किया है। अवधी क्षेत्र में प्रसिद्ध लोक–गायिका मालिनी अवस्थी का सावन, कजरी, ठुमरी, होली के गीतों में अभूतपूर्व योगदान है। 'बिहार कोकिला' शारदा सिन्हा ने भी मैथिली लोकगीतों में स्थान बनाया। मामेखान सूफी संगीत के लोकप्रिय गायक हैं।

राजस्थानी लोकगीतों में इला अरूण की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इन सभी लोक–कलाकारों ने विभिन्न राज्यों के लोक–गीतों को राष्ट्रीय एवं वैश्विक स्तर पर पहचान दिलाई है। साहित्य अकादमी द्वारा लोक–साहित्य का संरक्षण एवं संवर्धन करने का प्रयास किया जा रहा है। आज लोकगीतों के स्थान पर डी0जे0 का चलन हो गया है। ठुमरी, कजरी, चैती का गायत करने वाले लोक–कलाकारों की आजीविका पर संकट आ गया है। परिवर्तित परिवेश में आधुनिकता एवं तकनीकी के कारण लोक–गीतों के स्वरूप में अनेकानेक परिवर्तन हुए हैं। लोकगीत सांस्कृतिक विरासत का भी हिस्सा है। यदि वर्तमान में इसके संरक्षण के प्रयास नहीं किये गये, तो वह दिन दूर नहीं जब लोकगीत विलुप्त हो जायेंगे। युवा वर्ग पाश्चात्य संगीत

eISSN 2581-8996
HTTPS://DOI.ORG/10.5281/ZENODO.21742999
INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED JOURNAL
Volume 09, Issue 02, July 2026

की ओर आकर्शित हो रहा है। सांस्कृतिक महोत्सव इस दिशा में बेहतर सराहनीय कार्य करते हैं। आधुनिकता के दौर में लोक–गीतों का संरक्षण एक चुनौती से परिपूर्ण कार्य है। विभिन्न अवसरों पर गाये जाने वाले लोकगीत उस समाज की आत्मा एवं संस्कृति के लिए धरोहर रूपी दर्पण का कार्य करते हैं, जो उस समाज की संवेदनाओं एवं परम्पराओं को संरक्षित करते हैं। साथ ही सांस्कृतिक एकता के प्रतीक के रूप में परिलक्षित होते हैं। लोकगीत किसी भी समाज की सामाजिक संरचना को अत्यन्त संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत करते हैं। आज तकनीकी प्रगति एवं वैश्वीकरण ने लोकगीतों के अस्तित्व को चुनौती दी है।

आज आधुनिकता एवं पाश्चात्य प्रभाव के कारण लोकगीतों में पारम्परिक वाद्य यंत्रों (ढोलक, मंजीरा, करताल, हारमोनियम, सारंगी, बांसुरी) का प्रयोग कम होता जा रहा है। जिससे लोकगीत अपने मूल स्वरूप को खोते जा रहे हैं। डिजिटल रीमिक्स लोक–गीतों के मूलभाव को ही विलुप्त कर देते हैं। यद्यपि डिजिटल प्लेटफार्म– जैसे यू–ट्यूब, सोशल मीडिया, वेबसाइट, डिजिटल आर्काइव ने इसे एक वैश्विक मंच प्रदान कर संरक्षित करने का प्रयास किया है किन्तु फिर भी इसकी मौलिकता पर संकट उपस्थित हो गया है। लोकगीतों में लोक–संस्कृति, लोक–जीवन एवं रीति–रिवाज के अमूल्य रत्न पर्याप्त मात्रा में हैं। आज उनके संरक्षण की महती आवश्यकता है। यह एक सांस्कृतिक कर्तव्य भी है। पत्र–पत्रिकाओं एवं शोध के अध्ययन द्वारा जनचेतना को फैलाने का भी कार्य किया जा रहा है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि लोक–गीत हमें किसी भी देश–प्रदेश की संस्कृति एवं विचारों से परिचित कराते हैं। इनके संग्रह से साहित्य को भी सुद्रण होने में सहायता मिलती है। आधुनिकता एवं वैश्वीकरण के दौर में यद्यपि लोकगीतों के समक्ष अनेकानेक चुनौतियां हैं किन्तु फिर भी लोकगीतों का संरक्षण एवं इसकी संवेदनशीलता को बनाये रखना आज सर्वाधिक उत्तरदायित्व भी है। लोकगीतों को व्यवस्थित रूप से संरक्षित करना सामाजिक एवं सांस्कृतिक दायित्व भी है।

सन्दर्भ सूची

1– डॉ0 कुन्दन लाल 'उप्रेती' – लोक साहित्य के प्रतिमान, भारत प्रकाशन मन्दिर, अलीगढ, 1971 पृ0 19

2– द्विवेदी आचार्य हजारी प्रसाद (लेख) जनपद अक्टूबर 1952, पृ0 65

3– हिन्दी साहित्य–सम्मेलन पत्रिका (लोक संस्कृति अंक) 2010 पृ0 37

4– डॉ0 कुन्दन लाल 'उप्रेती' – लोक साहित्य के प्रतिमान, भारत प्रकाशन मन्दिर, अलीगढ, 1971 पृ0 43

5– उपाध्याय डॉ0 कृश्णदेव – भोजपुरी लोकगीत, भाग–1–हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, द्वितीय संस्करण 2011 – पृ0 444

6– अग्रवाल, डॉ0 कैलाश चन्द्र– लोक साहित्य : विधाऐं एवं दशाऐं चिन्मय प्रकाशन, मोतीलाल नेहरू रोड, आगरा पृ0 200

7– उपाध्याय डॉ0 कृश्णदेव – लोक साहित्य की भूमिका, हिन्दी साहित्य प्रेस, इलाहाबाद, 1957, पृ0– 230–231

8– सत्यार्थी देवेन्द्र – धरती गाती है, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली पृ0–178